सरल, सुव्यवस्थित एवं सुरक्षित आवागमन के लिए
दिल्ली उच्च न्यायालय का एक आदेश

विचार एवं लेखन

संजय कुमार साह

दिनांक
11 मई 2007

127, जे एवं के ब्लॉक, लक्ष्मी नगर, दिल्ली 92
संपर्क : 9811104605, 011–64593056
ईमेल : sanjaysalaj@rediffmail.com

सरल, सुव्यवस्थित एवं सुरक्षित आवागमन के लिए
दिल्ली उच्च न्यायालय का एक आदेश

कुल शब्द : 5,100 लगभग

सत्ता शिखर पर बैठे सिरफिरे लोगों की उटपटांग हरकतों ने जनता का जीना दूभर कर दिया है। कितना भी सिर धुन लीजिए आप स्थापित नियमों के सहारे इनसे पार नहीं पा सकते। हमें और आपको जीना है, तो खेल के नियम बदलने होंगे। इस सच्चाई से दो–चार होना हो, तो कहीं दूर जाने की जरूरत नहीं, बल्कि सत्ता चलाने वालों की रोजमर्रा की गतिविधियों को ध्यान से देखने, परखने और समझने की जरूरत है।

न्यायालय का एक आदेश

आम आदमी सोचता है कि देश की हालात सुधारने के लिए कड़े नियम बनाने और उसे कड़ाई से लागू करने की जरूरत है। पिछले कुछ दिनों में न्यायालय की ओर से कुछ ऐसे कदम उठाए भी गये हैं। 27 मार्च 2007 को दिल्ली उच्च न्यायालय ने दिल्ली की ट्रैफिक व्यवस्था को चुस्त–दुरुस्त करने के लिए कुछ कड़े आदेश जारी किये। ये आदेश 9 अप्रैल 2007 से लागू हैं।

आदेश की व्यवस्था लगभग इस प्रकार हैं :

1. बस चालकों एवं कंडक्टरों के लिए न्यूनतम आवश्यक शैक्षणिक योग्यता क्रमशः बारहवीं एवं दसवीं।
2. बस चालकों के लिए ट्रेनिंग एवं रिफ्रेशर कोर्स की व्यवस्था भी आवश्यक की गयी है।
3. जब तक सरकार चालकों के लिए एक पोशाक तय नहीं करती, तब तक उन्हें खाकी पोशाक धारण करने होंगे।
4. चालकों को अपना नाम तथा इंप्लायमेंट संख्या लिखा हुआ बैज पहनना चाहिए।
5. खलासी यात्रियों को बुलाने के लिए चिल्ला नहीं सकते।
6. ट्रैफिक नियम के प्रत्येक उल्लंघन के लिए देय कंप्लेन शुल्क के साथ 500 रुपये अतिरिक्त जुर्माना। इस प्रकार सामान्यतः कुल देय राशि 600 रुपये हो जाती है।
7. प्रेशर एवं म्यूजिकल हॉर्न पर प्रतिबंध
8. खिड़की पर काले सीसे पर प्रतिबंध
9. वाहन चलाते समय मोबाइल अथवा धूम्रपान पर प्रतिबंध
10. जुर्माना संबंधी सभी व्यवस्था 9 अप्रैल से लागू होगी। आदि।

<u>स्रोत :</u> टाइम्स ऑफ इंडिया, दिल्ली 7 अप्रैल 2007 एवं http://www.tribuneindia.com/2007/20070328/delhi.html पर प्रकाशित खबर।

आदेश में चालकों के लिए बारहवीं पास होने की अनिवार्यता एक ऐसा पहलू है, जिस पर बहस की गुजाइश है। **फर्ज कीजिए कि राष्ट्रपति महोदय ने एक सपना देखा कि सन् 2020 तक देश में सौ फीसदी संपूर्ण साक्षरता आ जाए! तो क्या इस स्वप्न को साकार करने का सही तरीका यही होगा कि न्यायालय एक आदेश जारी कर दे कि 2020 तक हर कोई पढ़ ले, वरना उसे देश से बाहर खदेड़ दिया जाएगा?** बस चालकों के लिए न्यूनतम बारहवीं तक की शैक्षणिक योग्यता तय करना क्या ऐसा ही एक कदम नहीं है? अगर देश की शिक्षा व्यवस्था सबको शिक्षा दे पाने का लक्ष्य हासिल करने में नाकाम रही है, तो इसके लिए सजा किसे दी जाए? शिक्षा अधिकारियों को या उन्हें, जो अशिक्षित रह गये?

मोटे तौर पर न्यायालय के आदेश में दो तरह की व्यवस्था की गयी है।

1. बस चालकों के लिए शैक्षणिक योग्यता बढ़ा दी गयी है। तथा उनके लिए नियमित ट्रेनिंग एवं रिफ्रेशर कोर्स अनिवार्य कर दिया गया है।
2. नियमों, पाबंदियों एवं चालान के सहारे ट्रैफिक कर्मियों का रौब–दाब बढ़ा दिया गया है।

आइए, इन दोनों व्यवस्थाओं पर बारी–बारी से विचार करें। थोड़ा खुले दिमाग से.... व्यवस्था बनाने वालों द्वारा दिखाए और सिखाए तरीके से थोड़ा हटकर ... थोड़ी आजादी .... थोड़ी आवारगी, थोड़ा स्वाभाविक विवेक से सोचें!

पहली व्यवस्था यानी, बस चालकों की शैक्षणिक योग्यता :

http://www.tribuneindia.com/2007/20070328/delhi.html पर 27 मार्च 2007 को प्रकाशित एक खबर के अनुसार दिल्ली में ''**न्यूनतम बारहवीं कक्षा तक पढ़ा–लिखा व्यक्ति ही बस चालक का लाइसेंस प्राप्त करने के योग्य होगा, क्योंकि यह स्किल्ड जॉब की श्रेणी में आता है। इस आदेश से पहले की व्यवस्था यह थी कि चालक का लाइसेंस लेने के लिए किसी व्यक्ति को सिर्फ यह प्रमाणित करना होता था कि उसने दसवीं की परीक्षा दी थी। इसके अलावा न्यायालय ने कंडक्टरों के लिए भी न्यूनतम दसवीं कक्षा तक की योग्यता निर्धारित की है।**'' उधर टाइम्स ऑफ इंडिया, दिल्ली में 7 अप्रैल 2007 को छपी एक खबर बताती है कि **चालकों के लिए ट्रेनिंग एवं रिफ्रेसर कोर्स भी आवश्यक** किये गये हैं। यह आदेश 9 अप्रैल 2007 से लागू हो चुका है।

चूँकि यह न्यायालय का आदेश है और अपने देश में न्यायालय एक माननीय संस्था है, इसलिए इसे बौद्धिक स्तर पर भी सिरे से खारिज तो नहीं किया जा सकता है। फिर भी कई लोगों को यह आदेश हजम नहीं हो पा रहा।

दिल्ली नगर निगम के विद्यालय के एक शिक्षक श्री अनिल झा यह नहीं समझ पा रहे हैं कि न्यायालय ने यह आदेश क्यों दिया? तथा इससे भला कौन सा उद्देश्य पूरा होता है? वाहन चलाना एक अलग तरह की योग्यता है, जिसका स्कूली शिक्षा से कोई नाता नहीं। बल्कि वाहन चलाना भी एक तरह की विद्या है और इस विद्या में निपुण बस चालकों को भी शिक्षित ही माना जाना चाहिए। बात बस इतनी है कि उन्होंने इस तरह की शिक्षा नहीं, बल्कि उस तरह की शिक्षा ली है। न्यायपालिका से जुड़े लोगों की विशेषज्ञता का क्षेत्र 'कानून' होता है। अन्य मामलों में वह निःसंदेह अपनी राय रख सकते हैं, पर कोई बाध्यकारी फरमान जारी करना कहाँ तक उचित है, इस पर पहले भी कई बार बहस हो चुकी है।

सर्वोच्च न्यायालय के अधिवक्ता नितेश राणा इस संबंध में मुख्य मुद्दा नैतिक शिक्षा को मानते हैं, जो चालक को जिम्मेदारी पूर्वक वाहन चलाने की प्रेरणा दे। पर क्या स्कूली शिक्षा का प्रमाणपत्र इस बात की गारंटी देता है? **क्या स्कूली शिक्षा के प्रमाण पत्र फर्जी नहीं बन सकते?** असली मुद्दा शिक्षा नहीं, बल्कि जिम्मेदारी पूर्वक वाहन चलाने का है। **हमें यह सोचना होगा कि चालक जिम्मेदारी पूर्वक वाहन क्यों नहीं चलाते।** और किस प्रकार सड़क पर सुरक्षित सफर सुनिश्चित किया जा सकता है।

आखिर बस चालकों के लिए शिक्षा जैसी शर्त जोड़ने के पीछे न्यायालय की सोच क्या है? दिल्ली देश की राजधानी है और एक अंतर्राष्ट्रीय शहर है। सन् 2010 में आयोजित होने वाले अंतर्राष्ट्रीय

खेल के लिए इसके चेहरे को चमकाया जा रहा है। शायद इसलिए न्यायालय ने सोचा होगा कि चलो थोड़ा बस चालकों को भी चमका दें! चाहे इसके लिए क्यों न कुछ अनपढ़ गरीब लोगों के सम्मान पूर्वक जीने–खाने के नैसर्गिक मानवाधिकार को कुचल दिया जाए। हालांकि पंच परमेश्वर में आस्था रखने वाले देश में न्यायालय से ऐसी सोच की उम्मीद नहीं की जा सकती है।

न्यायालय के आदेश के बाद कुछ लोगों की तर्क शक्ति जाग गयी है। वे सड़क दुर्घटनाओं के लिए बस चालकों की अशिक्षा को मुद्दा बनाने लगे हैं। पिछले दिनों मेरी बातचीत एक मासिक पत्रिका के संपादक से हो रही थी। वे मेरे एक आलेख के शीर्षक पर भड़क रहे थे। शीर्षक था– ''वाहन चालकों को पढ़ाने का सिरफिरा आदेश''। उन्हें ऐतराज इस बात पर था कि मैंने इस आदेश को सिरफिरा कहा था। वे न्यायालय के इस आदेश की मंशा से बहुत प्रभावित थे। उनका कहना था कि कितना अच्छा आदेश है! इसमें बस चालकों को पढ़ाने की बात की गयी है। ''क्या आप नहीं चाहते कि बस चालकों को भी शिक्षित होना चाहिए?'' उन्होंने अपने ड्राइवर का उदाहरण दिया कि वह अनपढ़ था, जिसके कारण काफी परेशानी होती थी। ''वह सड़क पर लिखे संकेत पढ़ नहीं पाता था। जाने का कहीं, पर चला कहीं और जाता था।'' इस पर मैंने पूछा कि आपने उस ड्राइवर का क्या किया? उन्होंने कहा कि ''वह छोड़कर चला गया?'' फिर क्या आपने एक पढ़ा–लिखा ड्राइवर रखा? ''हाँ, वह थोड़ा पढ़ा लिखा था।'' मैंने पूछा कि यह निर्णय किसने लिया कि एक अनपढ़ ड्राइवर की जगह एक थोड़ा–बहुत पढ़े लिखे ड्राइवर को रखना है? उन्होंने कहा कि ''मैंने''। मैंने कहा कि यही तो मैं समझाना चाहता हूँ कि एक अनपढ़ ड्राइवर की जगह थोड़ा–बहुत पढ़े लिखे ड्राइवर को रखने के लिए किसी न्यायालय को आदेश देने की जरूरत नहीं। वह तो हम आप खुद अपनी जरूरत को ध्यान में रख कर करते ही हैं। अब अगर न्यायालय यह नियम बना दे कि आपको बारहवीं पास ड्राइवर ही रखना पड़ेगा, तो क्या इससे आपको तकलीफ नहीं होगी? इस पर उन्होंने अपनी रक्षा करते हुए कहा कि ''बिल्कुल नहीं होगी''। **मैंने कहा कि यह तो आप अपनी बात आगे बढ़ाने के लिए बोल रहे हैं, पर आपके लिए यह संभव नहीं होगा कि न्यायालय के मर्जी के मुताबिक पढ़ा लिखा ड्राइवर रखें। जब मैंने इस पर जोड़ दिया, तो सहसा उनके मुँह से निकल पड़ा कि ''हाँ रखुँगा जरूर अपनी जरूरत के हिसाब से, पर एक फर्जी प्रमाणपत्र का प्रबंध कर लेंगे''। मैंने कहा कि बस यही तो मैं सुनना चाहता था। दरअसल न्यायालय का यह आदेश सिर्फ फर्जीवाड़ा ही बढ़ाएगा। सारे ड्राइवरों के हाथ में प्रमाणपत्र आ जाएंगे, पर किसी के पास वास्तविक शिक्षा नहीं होगी। क्या न्यायालय का यही उद्देश्य है?** और क्या खाली प्रमाणपत्र का जुगाड़ कर लेने से सड़कों पर वाहनों से होने वाली दुर्घटना रुक जाएगी? बिल्कुल नहीं। और इसलिए मैंने इस आदेश को सिरफिरा कहा है। संपादक महोदय मौन हो गये। शायद कोई दूसरा तर्क ढूंढ रहे थे। मैंने ऑफिस की मर्यादा का ध्यान कर उनसे क्षमा मांगी और एक बार आलेख पढ़ लेने का नम्र निवेदन किया, भले ही वे इसे प्रकाशित न करें। खैर! देखा जाए तो न्यायालय ने इस मुद्दे पर शायद गंभीरता से सोच–विचार नहीं की है। बस चालकों के लिए तो पहले भी पढ़ने का नियम था। दसवीं की परीक्षा में शामिल होना उनके लिए अनिवार्य था। तब वे जम कर दुर्घटना करते फिरते थे। अब अगर वे दो दर्जा और ज्यादा पढ़ लेंगे, तो इससे दुर्घटना भला क्यों रुक जाएगी?

क्या पढ़े–लिखे बस चालक तमीज एवं तहजीब से बात करेंगे? मेरे एक छोटे भाई को भी पहली नजर में उच्च न्यायालय का आदेश काफी अच्छा लगा। उसने कहा चलो कम–से–कम इससे यह तो होगा कि बस चालक यात्रियों से तमीज एवं तहजीब से बात करेंगे। मैंने उससे पूछा कि आप कितना पढ़े लिखे हैं? ''ग्रेजुएशन में पढ़ रहा हूँ।'' आपके पिता कितना पढ़े लिखे हैं? ''मुझसे थोड़ा कम।'' और आपके दादा? ''वो दसवीं तक पढ़े थे।'' फिर मैंने उनसे पूछा कि आप अपने दादा और पिता से अधिक पढ़े–लिखे हैं। तब तो आप अपने दादा और पिता से अधिक तमीजदार

होंगे? और आज जैसे संबंध आपके अपने पास–पड़ोसियों से हैं, उतने अच्छे संबंध शायद आपके दादा एवं पिता के अपने पास–पड़ोसियों से नहीं रहे होंगे? उन्होंने कहा ''नहीं, ऐसा नहीं है। उनके सामाजिक संबंध मुझसे अधिक अच्छे थे।'' हकीकत यही है कि आज जो शिक्षा हमें विद्यालय में मिलती है, वह यह सुनिश्चित नहीं करती कि उससे हम अधिक व्यवहार कुशल एवं तहजीबदार हो जाएंगे। जिस प्रकार हम अपने बारे में सोचते हैं, उसी प्रकार बस चालकों के बारे में क्यों नहीं सोचते?

वस्तुतः चालक लाइसेंस हासिल करने के लिए शिक्षा जैसी किसी शर्त को जोड़ना रिश्वतखोरी को बढ़ावा देना होगा। इक्के–दुक्के हेड़–फेड़ के साथ चालक कमोबेश वही रहेंगे, पर सबके पास एक सार्टिफिकेट चला आएगा। हाँ, इतना जरूर होगा कि ऐसे ईमानदार चालक जो फर्जी प्रमाणपत्र हासिल नहीं कर सकते, इस पेशे से बाहर हो जाएंगे। बेइमान, चालाक, धुरफंद किस्म के लोग प्रमाणपत्र हासिल कर लेंगे और इस पेशे पर ऐसे लोगों का राज हो जाएगा। फिर सोचिए कि ये बेईमान लोग आपके साथ कितनी साधुता से पेश आएंगे। आपका यह सपना, कि पढ़े लिखे ड्राइवर यात्रियों से सभ्य व्यवहार करेंगे, उड़न छू हो जाएगा। और आप एक बार फिर यह सोचने लगेंगे कि सरकार को इन असभ्य ड्राइवरों के खिलाफ कड़ा–से–कड़ा कानून बनाना चाहिए।

लोगों को अब यह समझ लेना चाहिए कि किस प्रकार आज की व्यवस्था ईमानदार, सभ्य एवं कर्मठ लोगों को सामाजिक–आर्थिक जीवन में पीछे धकेल रही है और बेईमानों तथा मक्कारों को आगे ला रही है। समाज का हजारों वर्षों का अनुभव रहा है कि सत्य की जीत होती है। **'सत्यमेव जयते'** में इस देश की अटूट आस्था है। यानी, बेईमान चाहे कितनी भी बेईमानी कर ले, एक दिन ईमानदार की जीत होकर रहती है। पर यह तब होता है, जब दोनों के सामने अवसर बराबर हों और व्यवस्था कोई भेद–भाव न करती हो। लेकिन जब न्यायालय बस चालक बनने के लिए बारहवीं की शिक्षा जैसी किसी अनिवार्य शर्त को जोड़ती है, तो बेईमानों एवं ईमानदारों के सामने अवसर एक समान नहीं रहते। बेईमानों को फर्जी प्रमाणपत्र के साथ मुख्यधारा में शामिल होने का अतिरिक्त बल मिल जाता है, जबकि ईमानदार लोगों के लिए आगे बढ़ने का रास्ता अवरुद्ध हो जाता है। **न्यायालय का यह आदेश समाज में बेइमानों को आगे बढ़ाता है और ईमानदारों को पीछे धकेलता है।** और यह आदेश तो सिर्फ एक मात्र नमूना है। हम रोजाना हर मोर्चे पर क्या यही नहीं कर रहे हैं?

न्यायालय शायद यह सोचती है कि सड़क पर दुर्घटना इसलिए होती है कि वाहन चालक बारहवीं पास नहीं हैं। **हकीकत यह है बारहवीं तक किसी भी कक्षा की पढ़ाई में ड्राइविंग जैसा कोई विषय मौजूद ही नहीं। तो यह भला कैसे मान लिया जाए कि बारहवीं पास ड्राइवर जिम्मेदारी पूर्वक वाहन चलाएंगे? सच्चाई शायद उलटी हो सकती है। इससे दुर्घटना बढ़ भी सकती है।** मान लीजिए कि दुर्भाग्य से व्यवस्था में कहीं भ्रष्टाचार नहीं होता है और ईमानदारी के साथ बारहवीं पास चालकों की ही भर्ती की जाती है। तब क्या होगा? तब स्थिति आम आदमी के लिए दयनीय हो जाएगी। बस चलाना **बारहवीं पास लोगों की मोनोपॉली** हो जाएगी। और हर मोनोपॉली की तरह यह मोनोपॉली भी खतरनाक होगी। उन्हें इस बात का कोई डर नहीं रहेगा कि उनकी बदतमीजी, गैरजिम्मेदारी अथवा ऐसी ही किसी गलती के लिए कोई उसे काम से हटा भी सकता है। फिर वे थोड़े बेफिक्र हो जाएंगे एवं यात्रियों के साथ अनुचित व्यवहार करना उनकी आदत बन जाएगी। यही नहीं, इन सब बातों के लिए उन्हें तनख्वाह भी पहले से अधिक मिलेगी। हलकी अनौपचारिक बात से पता चलता है कि आज एक बस चालक की तनख्वाह 9 हजार से 12 हजार रुपये के बीच होती है। जब यह पेशा बारहवीं पास लोगों की मोनोपॉली हो जाएगा, तब उनकी तनख्वाह थोड़ी बढ़कर शायद 18 हजार से 20 हजार तक हो सकती है। इसी

प्रकार दसवीं पास कंडक्टर की भी तनख्वाह बढ़ेगी। इस अतिरिक्त खर्च को यात्री टिकट से निकाला जाएगा। डीटीसी की हालत तो अभी ही दयनीय है। जब बारहवीं पास चालक अधिक वेतन की मांग करेंगे, तो उसका दीवाला ही निकल जाएगा।

परिवहन व्यवस्था में दोष वस्तुतः एक व्यवस्थागत दोष है, जिसे व्यवस्था में सुधार लाकर ही ठीक किया जा सकता है। न्यायालय का यह आदेश मानवाधिकार को अनदेखा करता है। तथा शिक्षा क्षेत्र में **सरकार की असफलताओं के लिए गरीबों को दंडित करने जैसा** है। न्यायालय से ऐसे आदेश की कत्तई उम्मीद नहीं थी। क्या अनपढ़–गरीबों को रोजी–रोटी अर्जित करने का अधिकार नहीं?

फिल्म, पत्रकारिता, रंगमंच, व्यापार आदि अनेक क्षेत्र हैं, जिसे सींच कर आगे बढ़ाने वाले लोगों ने उस विधा की कोई व्यवस्थित शिक्षा नहीं ली थी। लेकिन उनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। फर्ज कीजिए कि कल अदालत यह आदेश दे कि देश की सभी नृत्यांगनाओं एवं व्यापारियों के लिए बारहवीं पास होना जरूरी होगा। या फिर यह कहे कि फिल्म या रंगकर्म में आने के लिए संबंधित विधा की डिग्री जरूरी है। तो यह कैसा रहेगा? बेशक दिल्ली के बहुत से कारोबारी बारहवीं पास होंगे, पर वह इसलिए हैं कि वे जिस परिवेश से आए होंगे, वहाँ शिक्षा का माहौल होगा। पर **जिस परिवेश से बस ड्राइवर या कंडक्टर आते हैं, वहाँ सरकार शिक्षा फैला पाने में असफल रही होगी** या सरकारी व्यवस्था निकम्मी बैठी होगी। अगर उन अनपढ़ रह गये इलाकों में शिक्षा का प्रकाश फैलाने का यत्न किया जाए, तो निश्चित रूपेण भविष्य में वहाँ से निकल कर आने वाले बस ड्राइवर–कंडक्टर बारवीं ही नहीं, बल्कि स्नातक या परास्नातक भी पास होंगे। **शिक्षा फैलाने का दायित्त्व सरकार ने अपने ऊपर ले रखा है।** उसे सरकार के कंधे से उतार कर गरीबों पर फेंक देना और इस बहाने उसे रोजगार के साधनों से वंचित कर देना – आखिर न्यायालय किस युग में लौटना चाह रही है? न्यायाधीश महोदय ने भी बारहवीं की पढ़ाई जरूर की होगी और इतनी पढ़ाई के बावजूद इतना अविवेकी आदेश? क्या वह **स्कूली शिक्षा, जिसे न्यायाधीश महोदय थोप रहे हैं, सचमुच हर आदमी के लिए इतनी जरूरी है कि इसके न होने पर किसी से जीने–खाने का अधिकार ही छीन लिया जाए?**

आखिर शिक्षा के बारे में दिल्ली उच्च न्यायालय के क्या विचार हैं? क्या शिक्षा वह है, जो सरकारी स्कूलों में सरकारी सिलेबस के अनुसार पढ़ायी जाती है? क्या संगीत की अपनी अलग शिक्षा व्यवस्था या अपना अनुशासन नहीं है? क्या संगीत के विशारद को अशिक्षित माना जाए? क्या दसवीं–बारवीं पास न कर पाए क्रिकेटरों को मैदान से बाहर खदेड़ दिया जाए। संगीत या खेल विधा में कारोबार करने वाले उद्यमी जानते हैं कि बारवीं पास होने से कोई खिलाड़ी या संगीतज्ञ नहीं बन जाता। परिवहन व्यवस्था में उद्यम करने वाले उद्यमी भी जानते हैं कि बस चलाना भी एक कला है, एक कौशल है। और उसके लिए स्कूली शिक्षा की जरूरत नहीं।

न्यायालय का आदेश गरीब विरोधी है। आदेशानुसार ड्राइवरों को ट्रेनिंग और रिफ्रेशर कोर्स से गुजरना होगा। इन कोर्सों का एक शुल्क होगा। साथ ही पाठ्यक्रम की एक अवधि होगी। इससे होकर वही गुजर सकते हैं, जिनके पास इतनी रकम होगी। या जो इतना समय दे सकते हैं। अर्थात् पाठ्यक्रम के दौरान उनके घर का खर्च चलाने लायक उनके पास धन हो। और जो यह नहीं कर सकते हैं। वे इन पाठ्यक्रमों से होकर नहीं गुजर सकते। तो इस प्रकार न्यायालय छिपे तौर पर यह आदेश दे रहा है कि जिनका परिवार गरीब है, वे इस पेशे में नहीं आ सकते। क्या न्यायालय पैसे वालों के लिए रास्ता चौड़ा करना तथा निर्धन लोगों का मार्ग रोकना चाहता है? अगर नहीं तो क्या ये कोर्स निःशुल्क होंगे? और इनका लाभ लेने हेतु आने वाले अन्य खर्च जैसे संस्थान तक आने

जाने का खर्च और कॉपी किताब पेन का खर्च भी सरकार उठाएगी? और इस अवधि में घर का खर्चा भी सरकार उठाएगी? अगर न्यायालय यह सब सुनिश्चित नहीं कर सकता है, तो उसे ऐसा कोई फरमान जारी करने का अधिकार नहीं। **ऐसा तो निजी कंपनियों में भी नहीं होता। वहाँ योग्यता को सिर्फ स्कूली डिग्री से नहीं आंका जाता। कंपनी को लाभ पहुँचाने की क्षमता किसी के लिए सबसे बड़ी योग्यता होती है। बस उम्मीदवार को यह साबित करना होता है। सरकार अमीर एवं गरीब के साथ ऐसा भेद–भाव कैसे कर सकती है? उसका औचित्य एवं अस्तित्त्व ही जनहित के साथ जुड़ा होता है। न्यायालय का यह आदेश गरीबों के सामने जीने–खाने के कुछ अंतिम विकल्प को भी छीनने जैसा है। इसका जनता के बीच तीव्र प्रतिवाद होना चाहिए। अन्य मुद्दों पर धरने प्रदर्शन करने वालों को यहाँ भी आगे आना चाहिए।**

सिनेमा, संगीत, कला आदि अनेक क्षेत्रों में काम करने के लिए सरकार द्वारा मान्य किसी डिग्री की जरूरत नहीं। वहाँ कलाकार खुद अपने लाभ के लिए और खुद को बाजार में टिके रहने के लिए रिफ्रेशर कोर्स आदि अनेक माध्यम से अपने ज्ञान और कौशल को बढ़ाते रहते हैं। और सिर्फ कोर्स ही क्यों वे अपने मित्रों से बातचीत और श्रेष्ठ पुस्तकों के माध्यम से भी नयी बातें सीखते हैं। यह प्रक्रिया हर क्षेत्र में चलती रहती है। बस ड्राइवर भी ऐसा ही करते हैं। आज जो खलासी है। क्लीनर है। वह ड्राइवरों के संपर्क में रहकर गाड़ी चलाना सीखता है और कल उसी में से कोई ड्राइवर बन जाता है। आज जो ड्राइवर है, वह व्यापार एवं लाइन का गुर सीखकर कल अपना बस निकाल लेता है। और अपने अंदर काम करने वाले योग्य लड़के को ड्राइवर बना देता है। इस प्रकार तो हर लाइन में एक अनौपचारिक रिफ्रेशर कोर्स चलता रहता है। पर न्यायालय जड़ से जुड़े इन लोगों को उसी प्रकार जड़ से काट देना चाहता है, जिस प्रकार आज की मैकाले शिक्षा युवकों को अपनी जड़ों से काट देती है। **कल न्यायालय यह भी कह सकती है कि रिफ्रेशर कोर्स करना भी काफी नहीं। बल्कि कोर्स करने के बाद ड्राइवरों को न्यायालय के चारों ओर गाड़ी चलाकर एक परिक्रमा कर जज महोदय को दिखाना होगा और जब जज महोदय मोगांबो खुश हुआ के अंदाज में अपनी संतुष्टि जाहिर करेंगे, तभी ड्राइवरों को लाइसेंस मिलेगा।** न्यायालय की सोच किसी भी कोने से समझ में नहीं आती है। **क्या न्यायालय एक प्रेस रिलीज जारी कर इन प्रश्नों के संदर्भ में अपने विचार देना चाहेगा? या कुछ भी आदेश जारी कर देना उनकी मोनोपॉली है?**

न्यायालय का यह फरमान वैकल्पिक न्याय व्यवस्था की आवश्यकता की ओर इशारा करता है। एक ऐसी न्याय व्यवस्था जिसमें गरीबों एवं श्रमजीवियों से संबंधित मुद्दों को उनकी परिस्थितियों एवं जमीनी हकीकत के हिसाब से समझा जाए। सिर्फ कानूनी किताबों में लिखी बातों के आइने में नहीं।

पढ़े लिखे ड्राइवर की मंशा अच्छी है, पर क्या उसका यही तरीका होना चाहिए? शायद शिक्षा व्यवस्था को दुरुस्त कर हम इस लक्ष्य को बेहतर एवं न्यायपूर्ण ढंग से हासिल कर सकते हैं। वह दिन देश के इतिहास का बड़ा ही गौरवशाली दिन होगा, जिस दिन बस चालक एवं खलासी के पास भी बी.ए., एम.ए. की डिग्री होगी। रिक्शा वाले, रेहड़ी–पटरी वाले, जन–मजदूर, किसान, आदि सभी शिक्षित हों, यह कौन नहीं चाहता? पर इस लक्ष्य को हासिल करने के नाम पर देश की कोई संस्था अनपढ़ लोगों को रिक्शा चलाने, रेहड़–पटरी लगाने, मजदूरी या खेती करने के अधिकार से वंचित कर दे, तो यह शायद किसी को हजम नहीं होगा। और मुद्दा वही पुराना फिर उठ खड़ा

होगा कि गरीबी हटानी है या गरीबों को हटाना है? अशिक्षा दूर करनी है या अशिक्षितों को दूर करना है? पिछड़ापन दूर करना है या पिछड़ों को ही दूर भगा देना है?

न्यायालय की व्यवस्था का दूसरा हिस्सा, जिसमें नियमों, पाबंदियों एवं चालान के सहारे ट्रैफिक कर्मियों का रौब–दाब बढ़ा दिया गया है।

सड़क दुर्घटना का वास्तविक जिम्मेदार कौन?

दिल्ली उच्च न्यायालय के आदेश पर दिल्ली की ट्रैफिक व्यवस्था अत्यधिक कड़ी कर दी गयी है। लेकिन इस सख्त आदेश एवं इसके सफल कार्यान्वयन के पहले सप्ताह ही एक बस ने दिल्ली के प्रीत विहार में सड़क किनारे बैठे एक युवक को कुचल डाला। यद्यपि गस्साए भीड़ ने अपना गुस्सा बस पर उतार लिया। पर किसी का ध्यान इस बात पर नहीं गया कि परिवहन व्यवस्था की इतनी सख्ती के बाद भी अगर दुर्घटनाएँ होती रहें, तो फिर सख्ती का क्या औचित्य। ट्रैफिक व्यवस्था में उच्च न्यायालय के आदेश से आयी सख्ती के बाद रोजाना हजारों लोगों को चालान में भारी राशि भरनी पड़ती है। ट्रैफिक वालों ने पहले ही सप्ताह भारी भरकम वसूली कर ली। यहाँ एक सवाल सहसा उठ खड़ा होता है कि सख्ती की इस व्यवस्था में यदि किसी बस से कोई दुर्घटना हो जाए, तो उसके लिए जिम्मेदार कौन होगा? बस चालक, जिसे अपने विवेक से बस चलाने की कोई स्वतंत्रता नहीं? या फिर ट्रैफिक मैनेजमेंट? जिसे परिवहन में सुव्यवस्था कायम करने के लिए तैनात किया गया है, वेतन दिया गया है और पहले से छः गुणा अधिक चालान काटने का अधिकार भी दिया गया है।

लोग सोचते हैं कि दुर्घटनाएँ बस चालक की लापरवाही से होती हैं। और वे अपना गुस्सा बस चालक एवं बसों पर उतारने लगते हैं। जाहिर है कि दिल्ली उच्च न्यायालय के आदेश का उद्देश्य दुर्घटना रोकना ही रहा होगा। यात्रियों को परेशान करने तथा राजस्व उगाही के किसी घोषित उद्देश्य की तो कल्पना नहीं की जा सकती है। पर इतनी कड़ी व्यवस्था के बाद भी बस ने युवक को रौंद डाला। तो आखिर कैसे? व्यवस्था इसलिए कड़ी की गयी थी कि दुर्घटनाएँ न हों। पर यदि फिर भी दुर्घटना हो गयी, तो आखिर व्यवस्था कड़ी करने का क्या फायदा? और इस दुर्घटना के लिए अपराधी किसे माना जाए? व्यवस्था को? या चालक को? अगर व्यवस्था कड़ी की गयी है, तो दुर्घटना नहीं होनी चाहिए। और यदि हर परिस्थिति में दुर्घटना के लिए चालक को ही जिम्मेदार माना जाए, तो ट्रैफिक पर सख्त पहरा बैठाने का क्या औचित्य? अगर सजा देने से दुर्घटना रुकती है, तो क्यों न सजा की व्यवस्था को ही सख्त किया जाए और ट्रैफिक व्यवस्था कड़ी करने में बेवजह ऊर्जा का अपव्यय न किया जाए?

अगर सरकार दुर्घटना रोकने के लिए कड़ाई से कोई व्यवस्था करती है और उसे जायज भी ठहराती है, तो निश्चित रूप से उसके अच्छे परिणाम हासिल होने चाहिएं अन्यथा आगे होने वाली दुर्घटनाओं की जिम्मेदारी सरकार की होनी चाहिए। और सरकार को सजा भी मिलनी चाहिए। इसका लाभ यह होगा कि सरकार खुद कोई व्यवस्था या आदेश देते वक्त सावधान रहेगी और मनमानी के साथ कुछ भी व्यवस्था या आदेश नहीं दे देगी। उच्च न्यायालय के आदेश की स्थिति में सजा उच्च न्यायालय को मिलनी चाहिए। चालक को सजा तभी मिलनी चाहिए, जब चालक ने दुर्घटनाओं की जिम्मेदारी स्वीकारते हुए पूरी तरह अपने विवेक से बस चलाने की छूट मांगी हो। हमने ट्रैफिक जैसी व्यवस्था इसलिए रची है कि हमने इस तथ्य को स्वीकारा है कि आपसी होड़ मनुष्य का एक स्वाभाविक गुण है, इसलिए एक ट्रैफिक व्यवस्था होनी चाहिए। तो फिर आज दुर्घटना होने पर हम बस चालकों की आपसी होड़ और लापरवाही को जिम्मेदार क्यों ठहराते हैं? क्यों नहीं अपना गुस्सा ट्रैफिक व्यवस्थापकों पर उतारते हैं कि उन्होंने लापरवाही क्यों बरती? क्यों

बसों को एक सीमा से अधिक तेज हो जाने दिया? आखिर जनता का धन ट्रैफिक व्यवस्था पर खर्च होता है। वहाँ तैनात अधिकारियों को जनता के पैसे से तनख्वाह मिलती है। अगर वे अपनी जिम्मेदारी ठीक प्रकार नहीं निभा सकते हैं, तो उन्हें वहाँ रहने और जनता का धन लेने का अधिकार नहीं। यह सवाल साफ तौर पर सामने आता है कि आखिर ट्रैफिक व्यवस्थापकों की क्या जिम्मेदारी है? दिल्ली उच्च न्यायालय ने सड़क परिवहन को व्यवस्थित करने हेतु ट्रैफिक अधिकारियों को सभी तरह के अधिकारों से लैस कर दिया। पर उस पर कोई जिम्मेदारी नहीं डाली। ट्रैफिक को हर तरह की वसूली का अधिकार दे दिया। पर किसी भी अनहोनी की स्थिति में उसे जिम्मेदार नहीं ठहराया। इतने सारे अधिकारों के साथ यदि कोई जवाबदेही नहीं तय की जाती है, तो क्या यह संभव नहीं कि ट्रैफिक पुलिस इन अधिकारों का उपयोग अपनी जेब भरने के लिए करने लगें? एक निजी बस के खलासी से बात करने पर पता चला कि हर निजी बस हर लाल बत्ती पर हर माह सौ–सौ रुपये देता है। तभी उसकी बसें चलती रह सकती हैं। वरना उसका कोई–न–कोई चालान कटता रहेगा। क्या इसी प्रकार ट्रैफिक पुलिस को चालान काटने का अधिकार देकर सड़क को दुर्घटनामुक्त बनाया जाएगा? सरकारी ट्रैफिक व्यवस्था सिर्फ चालान काटने की मोनोपॉली है, जिसमें दुर्घटना के लिए किसी भी अधिकारी को जिम्मेदार नहीं बनाया गया है। यानी, सारा प्रबंधन तुम्हारा, नियंत्रण तुम्हारा, हक और हुकूमत तुम्हारी और इस सबके लिए खर्चे भी हम भरें और व्यवस्था फेल हो जाने पर सजा भी हम ही भुगतें। वाह रे व्यवस्था!

आखिर जनता ने क्यों ट्रैफिक विभाग को पैसे दिये? इसलिए कि वह सड़क पर सुव्यवस्था की देख–रेख करे। किसी को एक सीमा से अधिक रफ्तार में गाड़ी नहीं चलाने दे। परस्पर होड़ न होने दे। और इसके बावजूद अगर यह सब होता रहे। तो उनसे हिसाब तो लिया ही जाना चाहिए न! प्रीत विहार में बस चालक ने तेज वाहन चलाकर दुर्घटना कर दी, तो पिछे तैनात ट्रैफिक कर्मी क्या कर रहे थे? क्यों न उसे तत्काल नीलंबित कर जेल भेज दिया जाए?

दुर्घटना का वास्तविक कारण यह है कि ट्रैफिक तंत्र में किसी की कोई जवाबदेही तय नहीं की गयी है। अगर किसी ट्रैफिक कर्मी के क्षेत्र में कोई दुर्घटना हो, तो सजा का भागीदार वह ट्रैफिक कर्मी हो न कि दुर्घटना ग्रस्त चालक। तभी वे पूरी चौकसी और ईमानदारी से अपना काम करेंगे तथा अपनी रौब–दाब का नाजायज फायदा नहीं उठाएंगे।

यदि यह व्यवस्था हो कि किसी जगह कोई दुर्घटना होती है, तो उसके लिए ट्रैफिक सिग्नल पर खड़े जिम्मेदार अधिकारियों को सस्पेंड कर दिया जाएगा अथवा प्रत्येक दुर्घटना के लिए जिम्मेदार अधिकारियों को भी 600 रुपये जुर्माना लगेंगे। तो शायद तब वे रिश्वत बटोरने की जगह सड़क पर व्यवस्था बनाने में अधिक दिलचस्पी लेंगे। अभी तो वे शायद दिल से यही चाहते होंगे कि रोजाना कोई ना कोई बस कानून तोड़ता पकड़ा जाए, ताकि उनकी कुछ ऊपरी आमदनी होती रहे।

हमारा उद्देश्य आम आदमी को अधिक से अधिक ताकतवर बनाना है। पर जिस तरह की व्सवस्था की ओर हम बढ़ रहे हैं, वह वस्तुतः सरकारी अधिकारियों को ताकतवर बना रही है। और आम आदमी को उनके आगे नाक रगड़ने के लिए मजबूर कर रही है। बिना जिम्मेदारी के ताकत दिये जाने से सिर्फ भ्रष्टाचार ही बढ़ सकता है। ट्रैफिक व्यवस्था को जो ताकत दी गयी है, उसे जिम्मेदारियों की रास से नाथा जाए। वरना वह छुट्टे साँढ़ की तरह पब्लिक को ही नुकसान

पहुँचाएगी, जो कभी भी हमारे लोकतंत्र का उद्देश्य नहीं हो सकता। न ही इस बात के लिए जनता कर देती है न ही इस बात के लिए सरकारी अधिकारियों को वेतन दिये जाते हैं।

ट्रैफिक कर्मियों को मिले अधिकार के दुरुपयोग का एक उदाहरण :
मैं दो पत्रकारों के साथ बस में जा रहा था। एक दैनिक जागरण के तो दूसरे एक न्यूज एजेंसी से जुड़े थे। मैंने यूँ ही अचानक अपना ज्ञान ताजा करने के लिए खलासी से पूछ लिया कि आज कल रेड लाइट पर कितने रुपये दे रहे हो। उसने बताया कि हर माह हर रेड लाइट पर सौ रुपये। अगर नहीं देंगे, तो बस के भतेरे चालान कट जाएंगे। ये तो थी चालान काटने के अधिकार की एक हकीकत, जिसमें ट्रैफिक कर्मी को किसी भी जिम्मेदारी से मुक्त छोड़ कर सिर्फ चालान काटने का अधिकार दे दिया गया है। यहाँ बता देना चाहता हूँ कि प्रशासनिक सच्चाई से मैं पूर्णतः अवगत नहीं हूँ। पर जिस प्रकार बिना पढ़े भी मैं ट्रैफिक कर्मियों के चालान काटने के अधिकार से अवगत हूँ, उसी प्रकार मैं अब तक किसी ट्रैफिक कर्मी पर डाली गयी किसी जिम्मेदारी के बारे में क्यों नहीं जानता? क्या यह मेरी अनभिज्ञता है या यही हकीकत है?
खैर, उसी बस में खलासी के पीछे एक चालान का मारा एक आदमी सफर कर रहा था। उसने बताया कि अभी वह इंदिरा गांधी हवाई अड्डे से एक आदमी को कार से छोड़कर आ रहा है। वह बहुत थका हुआ था, सो उसने अपनी कार एक पेड़ के नीचे खड़ी की और सुस्ताने लगा। इतने में पुलिस आ गयी। उन लोगों ने गाड़ी सीज कर ली तथा छोड़ने के लिए 1200 रुपये मांगे। उसके पास 1000 रुपये ही थे। उसने 1000 रुपये ले लेने को कहा पर पुलिस वालों ने 1200 रुपये से एक पैसे भी कम पर छोड़ने से इनकार कर दिया। और कहा कि यदि यह गाड़ी दिल्ली कैंट के थोन में चली गयी, तो वहां से छुड़ाने के लिए 3200 रुपये देने होंगे। कार चालक के पास 1200 रुपये में दो सौ कम पड़ रहे थे, इसलिए दूसरे दिन उसे न सिर्फ 3200 रुपये देने पड़ रहे थे, बल्कि आज दिल्ली से मेरठ जाने एवं दूसरे दिन दो सौ रुपये लाने का खर्च भी अतिरिक्त पड़ रहा था। क्या इसी प्रकार दिल्ली की सड़कों को सुव्यवस्थित एवं सुरक्षित बनाया जाएगा? क्या कोई अन्य भ्रष्टाचारमुक्त तरीका न्यायालय इजाद नहीं कर सकती? और अगर नहीं कर सकती, तो क्या इस प्रकार के आदेश देने से बच नहीं सकती?

परिवहन उद्यमियों को दीजिए आजादी

अगर परिवहन क्षेत्र में उद्यमी को स्वतंत्रा पूर्वक काम करने का मौका दिया जाए, तो वाहन चलाने की कला को भी एक हुनर के रूप में विकसित होने का मौका मिलेगा। बस परिचालन में उद्यमियों को काम करने की आजादी नहीं। बस परिचालक यात्रियों के अलग अलग समूहों की जरूरतों के हिसाब से अलग–अलग सुविधाओं से लैस बस सड़क पर नहीं उतार सकते। नयी सुविधा वाली नयी बसों के नये ब्रांड या श्रृंखला पेश नहीं कर सकते, अपनी बुद्धि का इस्तेमाल कर अन्य प्रयोग नहीं कर सकते, इसलिए बस परिचालन के क्षेत्र में वास्तविक प्रतियोगिता नहीं है। और इसीलिए वाहन चलाने की हुनर का न कोई संरक्षक है, न उसे कोई तराशने वाला है। आज उद्यमियों को अच्छे मैनेजर की जरूरत है, इसलिए मैनेजमेंट की शिक्षा देने वाले संस्थान रोजाना खुलते जा रहे हैं। सिनेमा एक फलता–फूलता उद्योग है। वहाँ प्रतियोगिता है। तभी सिनेमाई दक्षता प्रदान करने वाले अनेक संस्थान सामने आ रहे हैं। जिन्हें जरूरत है। वे वहाँ जाकर व्यवस्थित ज्ञान हासिल करते हैं। जो इसके बगैर ही आगे बढ़ सकते हैं। उन्हें जोखिन लेने की पूरी आजादी है। ऐसा ही पत्रकारिता में है। ऐसा ही हर क्षेत्र में होता है। क्या न्यायालय अर्थशास्त्र के इस सरलता से भेजे में आ सकने वाली बात को समझने का प्रयास करेगी? अगर न्यायालय परिवहन व्यवस्था में शिक्षा को लाना चाहती है, तो जरूरी है कि उद्यमियों को नये–नये प्रयोग करने की आजादी दी जाए। तभी परिवहन व्यवस्था में प्रतियोगिता आएगी एवं परिवहन संबंधी दक्षता प्रदान करने वाले ट्रेनिंग संस्थान एवं रिफ्रेशर कोर्स सामने आने लगेंगे। अन्यथा खाली न्यायालय के आदेश पर कोई रिफ्रेशर कोर्स में जाने की बेवकूफी नहीं करने वाला। हाँ भ्रष्टाचार के द्वार जरूर खुल सकते हैं।

न्यायालय को एक बार अनपढ़, पिछड़े एवं गरीब लोगों के मानवाधिकार के बारे में सोचना चाहिए। अगर सरकार देश के करोड़ो बच्चों को शिक्षित नहीं कर पायी है, तो उसमें अनपढ़ रह गये लोगों का क्या कसूर? सरकार की लापरवाही के लिए भुक्तभोगी को सजा देना और रोजी–रोटी से वंचित कर देना कहाँ का न्याय है? हजारों गरीब निरक्षर लोगों को रोजगार के कुछ अंतिम बचे–खुचे अवसरों से वंचित कर देने वाले इस मानवाधिकार विरोधी आदेश को अविलंब वापस लिया जाए।

कुछ सुझाव :

इस आदेश में निम्नलिखित सुधार किये जा सकते हैं :

बस चालकों पर थोपी गयी शिक्षा की जिम्मेदारी से उसे मुक्त किया जाए। शिक्षा संबंधी कोई भी प्रावधान न रखा जाए।
शिक्षा फैलाने के लिए शिक्षा व्यवस्था को दुरुस्त किया जाए। तथा उसे उसी प्रकार अमीर एवं गरीब के जीवन में समान रूप से उतर आने के लिए प्रोत्साहित किया जाए, जिस प्रकार सूरज अपनी धूप, चांद अपनी शीतलता तथा बादल अपना पानी बिना अमीर–गरीब का भेद किये सब पर बरसाते हैं।
न्यायालय के आदेश के बाद दिल्ली के ट्रैफिक में थोड़ा सुधार जरूर हुआ है, पर रिश्वत एवं यात्रियों का शोषण भी पहले से कुछ ज्यादा बढ़ गया है।

यहाँ ट्रैफिक कर्मियों को दिये अधिकार के साथ उन पर पूरी जिम्मेदारी भी डालनी चाहिए। अगर वे नियम तोड़ने के लिए चालकों से जुर्माना लेते हैं, तो दुर्घटना होने पर सजा सिर्फ ट्रैफिक कर्मियों को मिलनी चाहिए। ताकि वे सावधानी से ट्रैफिक पर नजर रखें न कि हफ्ता वसूली में लगे रहें।

विचार एवं लेखन – संजय कुमार साह

आभार :
टाइम्स ऑफ इंडिया
दैनिक ट्रिब्यून
तनुश्री राय चौधरी, रिपोर्टर, टाइम्स ऑफ इंडिया
(इस आदेश की सूचना सर्वप्रथम इनके रिपोर्ट से ही मिली)

दिनांक : 11 मई 2007